दुष्यंत कुमार की पंद्रह कविताएँ

हो गई है पीर पर्वत-सी

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी,
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
सारी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

बाढ़ की संभावनाएँ सामने हैं

बाढ़ की संभावनाएँ सामने हैं,
और नदियों के किनारे घर बने हैं ।

चीड़-वन में आँधियों की बात मत कर,
इन दरख्तों के बहुत नाजुक तने हैं ।

इस तरह टूटे हुए चेहरे नहीं हैं,
जिस तरह टूटे हुए ये आइने हैं ।

आपके कालीन देखेंगे किसी दिन,
इस समय तो पाँव कीचड़ में सने हैं ।

जिस तरह चाहो बजाओ इस सभा में,
हम नहीं हैं आदमी, हम झुनझुने हैं ।

अब तड़पती-सी गजल कोई सुनाए,
हमसफर ऊँघे हुए हैं, अनमने हैं ।

अपाहिज व्यथा

अपाहिज व्यथा को सहन कर रहा हूँ,
तुम्हारी कहन थी, कहन कर रहा हूँ ।

ये दरवाजा खोलो तो खुलता नहीं है,
इसे तोड़ने का जतन कर रहा हूँ ।

अँधेरे में कुछ जिंदगी होम कर दी,
उजाले में अब ये हवन कर रहा हूँ।

वे संबंध अब तक बहस में टँगे हैं,
जिन्हें रात-दिन स्मरण कर रहा हूँ।

तुम्हारी थकन ने मुझे तोड़ डाला,
तुम्हें क्या पता क्या सहन कर रहा हूँ ।

मैं अहसास तक भर गया हूँ लबालब,

तेरे आँसुओं को नमन कर रहा हूँ।

समालोचको की दुआ है कि मैं फिर,
सही शाम से आचमन कर रहा हूँ।

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है|

एक चिनगारी कहीं से ढूँढ लाओ दोस्तों
इस दिए में तेल से भीगी हुई बाती तो है|

एक खंडहर के हृदय-सी, एक जंगली फूल-सी
आदमी की पीर गूंगी ही सही, गाती तो है|

एक चादर साँझ ने सारे नगर पर डाल दी
यह अँधेरे की सड़क उस भोर तक जाती तो है|

निर्वसन मैदान में लेटी हुई है जो नदी
पत्थरों से, ओट में जा-जाके बतियाती तो है|

दुख नहीं कोई कि अब उपलब्धियों के नाम पर
और कुछ हो या न हो, आकाश-सी छाती तो है|

कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए

कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए
कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए|

यहाँ दरख्तों के साए में धूप लगती है
चलो यहाँ से चले और उम्र भर के लिए|

न हो कमीज तो घुटनों से पेट ढक लेंगे
ये लोग कितने मुनासिब हैं इस सफर के लिए|

खुदा नहीं न सही आदमी का ख्वाब सही
कोई हसीन नजारा तो है नजर के लिए|

वो मुतमइन हैं कि पत्थर पिघल नहीं सकता
मैं बेकरार हूँ आवाज में असर के लिए|

जिएँ तो अपने बगीचे में गुलमोहर के तले
मरें तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए|

गांधीजी के जन्मदिन पर

मैं फिर जनम लूँगा
फिर मैं
इसी जगह आऊँगा
उचटती निगाहों की भीड़ में
अभावों के बीच
लोगों की क्षत-विक्षत पीठ सहलाऊँगा
लँगड़ाकर चलते हुए पावों को
कंधा दूँगा
गिरी हुई पद-मर्दित पराजित विवशता को
बाँहों में उठाऊँगा ।

इस समूह में

इन अनगिनत अनचीन्ही आवाजों में
कैसा दर्द है
कोई नहीं सुनता!
पर इन आवाजों को
और इन कराहों को
दुनिया सुने मैं ये चाहूँगा ।

मेरी तो आदत है
रोशनी जहाँ भी हो
उसे खोज लाऊँगा
कातरता, चुप्पी या चीखें,
या हारे हुओं की खीज
जहाँ भी मिलेगी
उन्हें प्यार के सितार पर बजाऊँगा ।

जीवन ने कई बार उकसाकर
मुझे अनुल्लंघ्य सागरों में फेंका है
अगन-भट्ठियों में झोंका है,
मैने वहाँ भी
ज्योति की मशाल प्राप्त करने के यत्न किए
बचने के नहीं,
तो क्या इन टटकी बंदूकों से डर जाऊँगा ?
तुम मुझको दोषी ठहराओ
मैने तुम्हारे सुनसान का गला घोंटा है
पर मैं गाऊँगा
चाहे इस प्रार्थना सभा में
तुम सब मुझपर गोलियाँ चलाओ
मैं मर जाऊँगा
लेकिन मैं कल फिर जनम लूँगा
कल फिर आऊँगा ।

इनसे मिलिए

पाँवों से सिर तक जैसे एक जनून
बेतरतीबी से बढ़े हुए नाखून|

कुछ टेढ़े-मेढ़े बेंगे दागिल पाँव
जैसे कोई एटम से उजड़ा गाँव|

टखने ज्यों मिले हुए रक्खे हों बाँस
पिंडलियाँ कि जैसे हिलती-डुलती काँस|

कुछ ऐसे लगते हैं घुटनों के जोड़
जैसे ऊबड़-खाबड़ राहों के मोड़|

गट्टों-सी जंघाएँ निष्प्राण मलीन
कटि, रीतिकाल की सुधियों से भी क्षीण|

छाती के नाम महज हड्डी दस-बीस
जिस पर गिन-चुन कर बाल खड़े इक्कीस|

पुट्ठे हों जैसे सूख गए अमरूद
चुकता करते-करते जीवन का सूद|

बाँहें ढीली-ढाली ज्यों टूटी डाल
अँगुलियाँ जैसे सूखी हुई पुआल|

छोटी-सी गरदन रंग बेहद बदरंग
हरवक्त पसीने का बदबू का संग|

पिचकी अमियों से गाल लटे से कान
आँखें जैसे तरकश के खुट्टल बान|

माथे पर चिंताओं का एक समूह
भौंहों पर बैठी हरदम यम की रूह|

तिनकों से उड़ते रहने वाले बाल
विद्युत परिचालित मखनातीसी चाल|

बैठे तो फिर घंटों जाते हैं बीत
सोचते प्यार की रीत भविष्य अतीत|

कितने अजीब हैं इनके भी व्यापार
इनसे मिलिए ये हैं दुष्यंत कुमार ।

आज सड़कों पर

आज सड़कों पर लिखे हैं सैकड़ों नारे न देख,
पर अँधेरा देख तू आकाश के तारे न देख।

एक दरिया है यहाँ पर दूर तक फैला हुआ,
आज अपने बाज़ुओं को देख पतवारें न देख।

अब यकीनन ठोस है धरती हकीकत की तरह,
यह हकीकत देख लेकिन खौफ के मारे न देख।

वे सहारे भी नहीं अब जंग लड़नी है तुझे,
कट चुके जो हाथ उन हाथों में तलवारें न देख।

ये धुंधलका है नजर का तू महज मायूस है,
रोजनों को देख दीवारों में दीवारें न देख।

राख कितनी राख है, चारों तरफ बिखरी हुई,
राख में चिनगारियाँ ही देख अंगारे न देख।

मेरे स्वप्न तुम्हारे पास सहारा पाने आएँगे

मेरे स्वप्न तुम्हारे पास सहारा पाने आएँगे
इस बूढे पीपल की छाया में सुस्ताने आएँगे|

हौले-हौले पाँव हिलाओ जल सोया है छेड़ो मत
हम सब अपने-अपने दीपक यहीं सिराने आएँगे|

थोडी आँच बची रहने दो थोडा धुँआ निकलने दो
तुम देखोगी इसी बहाने कई मुसाफिर आएँगे

उनको क्या मालूम निरूपित इस सिकता पर क्या बीती
वे आए तो यहाँ शंख सीपियाँ उठाने आएँगे|

फिर अतीत के चक्रवात में दृष्टि न उलझा लेना तुम
अनगिन झोंके उन घटनाओं को दोहराने आएँगे|

रह-रह आँखों में चुभती है पथ की निर्जन दोपहरी
आगे और बढे तो शायद दृश्य सुहाने आएँगे|

मेले में भटके होते तो कोई घर पहुँचा जाता
हम घर में भटके हैं कैसे ठौर-ठिकाने आएँगे|

हम क्यों बोलें इस आँधी में कई घरौंदे टूट गये
इन असफल निर्मितियों के शव कल पहचाने जयेंगे|

हम इतिहास नहीं रच पाये इस पीडा में दहते हैं
अब जो धारायें पकडेंगे इसी मुहाने आएँगे|

अब तो पथ यही है

जिंदगी ने कर लिया स्वीकार,
अब तो पथ यही है|
अब उभरते ज्वार का आवेग मद्धिम हो चला है,
एक हलका सा धुंधलका था कहीं, कम हो चला है,
यह शिला पिघले न पिघले, रास्ता नम हो चला है,
क्यों करूँ आकाश की मनुहार ,
अब तो पथ यही है |

क्या भरोसा, काँच का घट है, किसी दिन फूट जाए,
एक मामूली कहानी है, अधूरी छूट जाए,
एक समझौता हुआ था रौशनी से, टूट जाए,
आज हर नक्षत्र है अनुदार,
अब तो पथ यही है|

यह लड़ाई, जो की अपने आप से मैंने लड़ी है,
यह घुटन, यह यातना, केवल किताबों में पढ़ी है,
यह पहाड़ी पाँव क्या चढ़ते, इरादों ने चढ़ी है,
कल दरीचे ही बनेंगे द्वार,
अब तो पथ यही है |

सूर्य का स्वागत

परदे हटाकर करीने से
रोशनदान खोलकर
कमरे का फर्नीचर सजाकर
और स्वागत के शब्दों को तोलकर
टक टकी बाँधकर बाहर देखता हूँ
और देखता रहता हूँ मैं।

सड़कों पर धूप चिलचिलाती है
चिड़िया तक दिखाई नही देती
पिघले तारकोल में
हवा तक चिपक जाती है बहती बहती,
किन्तु इस गर्मी के विषय में किसी से
एक शब्द नही कहता हूँ मैं।
सिर्फ कल्पनाओं से
सूखी और बंजर जमीन को खरोंचता हूँ
जन्म लिया करता है जो ऐसे हालात में
उनके बारे में सोचता हूँ
कितनी अजीब बात है कि आज भी
प्रतीक्षा सहता हूँ।

सूचना

कल माँ ने यह कहा -
कि उसकी शादी तय हो गई कहीं पर,
मैं मुसकाया वहाँ मौन
रो दिया किंतु कमरे में आकर
जैसे दो दुनिया हों मुझको
मेरा कमरा औ' मेरा घर ।

सूर्यास्त: एक इम्प्रेशन

सिंधु के किनारे
निज सूरज जब
किरणों के बीज-रत्न
धरती के प्रांगण में
बोकर
हारा-थका

स्वेद-युक्त
रक्त-वदन
थकन मिटाने को
नए गीत पाने को
आया,
तब निर्मम उस सिंधु ने डुबो दिया,
ऊपर से लहरों की अँधियाली चादर ली ढाँप
और शांत हो रहा ।

लज्जा से अरुण हुई
तरुण दिशाओं ने
आवरण हटाकर निहारा दृश्य निर्मम यह !
क्रोध से हिमालय के वंश-वर्तियों ने
मुख-लाल कुछ उठाया
फिर मौन सिर झुकाया
ज्यों- 'क्या मतलब ?'
एक बार सहमी
ले कंपन, रोमांच वायु
फिर गति से बही
जैसे कुछ नहीं हुआ !

मैं तटस्थ था, लेकिन
ईश्वर की शपथ !
सूरज के साथ
हृदय डूब गया मेरा ।
अनगिन क्षणों तक
स्तब्ध खड़ा रहा वहीं
क्षुब्ध हृदय लिए ।
औ' मैं स्वयं डूबने को था
स्वयं डूब जाता मैं
यदि मुझको विश्वास यह न होता -
'मैं कल फिर देखूँगा यही सूर्य

ज्योति-किरणों से भरा-पूरा
धरती के उर्वर-अनुर्वर प्रांगण को
जोतता-बोता हुआ,
हँसता, ख़ुश होता हुआ ।'

ईश्वर की शपथ !
इस अँधेरे में
उसी सूरज के दर्शन के लिए
जी रहा हूँ मैं
कल से अब तक !

मापदंड बदलो

मेरी प्रगति या अगति का
यह मापदंड बदलो तुम,
जुए के पत्ते-सा
मैं अभी अनिश्चित हूँ ।
मुझ पर हर ओर से चोटें पड़ रही हैं,
कोपलें उग रही हैं,
पत्तियाँ झड़ रही हैं,
मैं नया बनने के लिए खराद पर चढ़ रहा हूँ,
लड़ता हुआ
नई राह गढ़ता हुआ आगे बढ़ रहा हूँ ।

अगर इस लड़ाई में मेरी साँसें उखड़ गईं,
मेरे बाज़ू टूट गए,
मेरे चरणों में आँधियों के समूह ठहर गए,
मेरे अधरों पर तरंगाकुल संगीत जम गया,
या मेरे माथे पर शर्म की लकीरें खिंच गईं,
तो मुझे पराजित मत मानना,
समझना -

तब और भी बड़े पैमाने पर
मेरे हृदय में असंतोष उबल रहा होगा,
मेरी उम्मीदों के सैनिकों की पराजित पंक्तियाँ
एक बार और
शक्ति आजमाने को
धूल में खो जाने या कुछ हो जाने को
मचल रही होंगी ।
एक और अवसर की प्रतीक्षा में
मन की कंदीलें जल रही होंगी ।

ये जो फफोले तलुओं मे दीख रहे हैं
ये मुझको उकसाते हैं ।
पिंडलियों की उभरी हुई नसें
मुझ पर व्यंग्य करती हैं ।
मुँह पर पड़ी हुई यौवन की झुर्रियाँ
कसम देती हैं ।
कुछ हो अब, तय है -
मुझको आशंकाओं पर काबू पाना है,
पत्थरों के सीने में
प्रतिध्वनि जगाते हुए
परिचित उन राहों में एक बार
विजय-गीत गाते हुए जाना है -
जिनमें मैं हार चुका हूँ ।

मेरी प्रगति या अगति का
यह मापदंड बदलो तुम
मैं अभी अनिश्चित हूँ ।

गीत का जन्म

एक अंधकार बरसाती रात में

बर्फीले दर्रों-सी ठंडी स्थितियों में
अनायास दूध की मासूम झलक सा
हंसता, किलकारियाँ भरता
एक गीत जन्मा
और
देह में उष्मा
स्थिति संदर्भों में रोशनी बिखेरता
सूने आकाशों में गूँज उठा :
-बच्चे की तरह मेरी उंगली पकड़ कर
मुझे सूरज के सामने ला खड़ा किया ।

यह गीत
जो आज
चहचहाता है
अंतर्वासी अहम से भी स्वागत पाता है
नदी के किनारे या लावारिस सड़कों पर
नि:स्वन मैदानों में
या कि बंद कमरों में
जहाँ कहीं भी जाता है
मरे हुए सपने सजाता है-
-बहुत दिनों तड़पा था अपने जनम के लिए ।